Sanchar Sutra | ISSN No. 2584-1769

याज्ञवल्क्य स्मृति में नारी के दाय संबंधी अधिकार

दीपमालिका

,स्नातक शोधार्थी (संस्कृत ऑनर्स, चतुर्थ वर्ष

(मिरांडा हाउस, दिल्ली विश्वविद्यालय

सारांश (Abstract)

<u>भूमिका</u> -

भारतीय धर्मशास्त्रीय परंपरा में स्मृतिकरों के द्वारा नारी को एक तरफ पारिवारिक एवं धार्मिक जीवन का आधार माना है और दूसरी तरफ आर्थिक व समाजिक संरचना एवं पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत नारी के अधिकारों को भी सीमित किया है। इस संदर्भ मे याज्ञवल्क्य स्मृति एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जिसकी विषय निरूपण पद्धति अन्य ग्रंथों की अपेक्षा अत्यंत सुग्रथित है।याज्ञवल्क्य स्मृति के व्यवहार अध्याय मे 25 प्रकरण है, जिसमे विधि के अंतर्गत वर्णित तीसरा विषय दायविभाग (उत्तराधिकार एवं सम्पत्ति विभाजन) है। याज्ञवल्क्य के सभी व्यवहार पदों में सबसे अधिक श्लोक इसी विषय पर मिलते है। दायभग केवल (सम्पत्ति के विभाजन) की कानूनी विधि नही है अतः यह तत्कालीन समाजिक शक्ति संरचना का भी एक जीवंत दर्पण है। अतः याज्ञवल्क्य से पूर्ववर्ती स्मृतिकारो (जैसे आचार्य मनु) ने नारी के अधिकारों को अत्यंत सीमित रखा था। किंतु याज्ञवल्क्य के द्वारा नारी को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। और नारी को केवल आश्रित रूप मे ही नही बल्कि अधिकार संपन्न रूप मे भी मान्यता देने का प्रयास किया।

<u>शोध उद्देश्य</u>

प्रस्तुत शोध पत्र का विषय "याज्ञवल्क्य स्मृति मे नारी के दाय संबंधी अधिकार" है। जिसका मुख्य उद्देश्य स्त्रियों के अधिकारों का विश्लेषण करना है। अतः यह जानना है कि किस प्रकार से याज्ञवल्क्य के द्वारा नारी के सम्पत्ति संबंधि अधिकारों को सुदृढ़ किया गया अतः पत्नी, पुत्री, और विधवा को दाय में भागीदारी का अधिकार स्त्रीधन की मान्यता तथा पुत्राभाव में उत्तराधिकार की स्वीकृति ने नारी की समाजिक एवं आर्थिक स्वायत्तता को किस प्रकार से सुरक्षित किया परंतु नारी सम्बंधित अधिकार के विषय मे यह प्रश्न उठता है कि क्या ये अधिकार वास्तविक सशक्तिकरण था या फिर पितृसत्तात्मक संरचना के भीतर नियंत्रित

समावेश का उदाहरण. अतः दायभाग सिर्फ सम्पति का प्रश्न नही बल्कि शक्ति संतुलन का भी प्रश्न है।

शोध प्रविधि

इस शोध पत्र में व्याख्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। इसके अंतर्गत याज्ञवल्क्य स्मृति के दायभाग संबंधी सिद्धांतों का गहन एवं सूक्ष्म अनुशीलन करते हुए नारी से संबंधित अधिकारों का विस्तृत विवेचन किया गया है।जिसमें दाय के नियमों, उत्तराधिकार की व्यवस्था तथा नारी की स्थिति से संबंधित प्रावधानों का तात्त्विक एवं वैधानिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करते हुए मनुस्मृति जैसे अन्य प्रमुख धर्मशास्त्रीय ग्रंथों के साथ तुलनात्मक अध्ययन को प्रस्तुत कर ।नारी के दाय संबंधी अधिकारों में निहित समानताओं एवं भिन्नताओं को स्पष्ट किया गया है। यह अध्ययन स्त्री से संबंधित अधिकारों के क्रमिक विकास, परिवर्तनशील स्वरूप तथा उनके सामाजिक-वैधानिक अधिकारों का एक सुव्यवस्थित एवं तार्किक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

अपेक्षित परिणाम

निष्कर्षतः वर्तमान काल मे जब नारी की आर्थिक आत्मनिर्भरता और पैतृक सम्पति मे समान अधिकार प्रमुख वैश्विक परामर्श का विषय है तब याज्ञवल्क्य के द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक एवं मार्गदर्शक सिद्ध होते है।अतः यह शोध नारी के दाय संबंधी अधिकारों के विषय में एक संतुलित बहुआयामी विधिक दृष्टिकोण को प्रकाशित करेगा ।

मुख्य शब्द : स्त्री-धन, याज्ञवल्क्य स्मृति, दाय संबंधी अधिकार,पितृसत्तात्मक संरचना, आर्थिक स्वायत्तता ।

याज्ञवल्क्य स्मृति में नारी के दाय संबंधी अधिकार

पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति ही मनुष्य जीवन का परम लक्ष्य है । अतः जिसका पालन सभी मनुष्य को करना चाहिए । गृहस्थ आश्रम और वैवाहिक जीवन का मूल आधार स्त्री ही होती है, अतः इस आश्रम की प्रगति के लिए पुरूषों के समान ही स्त्रियों की भी अर्थ प्राप्ति में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है । “श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः” ।[1] अर्थात् श्रुति को वेद जानना चाहिए और धर्मशास्त्र को ही स्मृति ग्रंथ मानना चाहिए। वेदों से निकले हुए धर्म और समाजिक नियमों का जो व्यवस्थित एवं विस्तृत स्वरूप ऋषियों द्वारा लिखा गया वही स्मृति ग्रंथ है । धर्मशास्त्रीय परम्परा में याज्ञ. स्मृति को सबसे महत्वपूर्ण प्राचीन कानूनी ग्रंथों में से एक माना जाता है । जो मुख्यतः कानूनी कर्तव्यो, नैतिकता, विधि और सामाजिक व्यवस्था से संबंधित है । बहुत से ग्रंथ जो केवल धर्म और अनुष्ठानिक प्रक्रियाओं पर ध्यान केंद्रित करता है । वही याज्ञ.स्मृति में कानून, नैतिकता और आध्यात्मिकता के लिए एक संतुलित दृष्टिकोण दृष्टिगोचर होता है । याज्ञ. स्मृति के व्यवहार अध्याय मे दायभाग से संबंधित सभी महत्वपूर्ण विषयों पर हमें विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है । जैसे उत्तराधिकार , संपत्ति विभाजन स्त्री संबंधित विभिन्न अधिकारों जैसे स्त्रीधन आदि विषयों पर अन्य ग्रथों की अपेक्षाकृत अधिक व्यवस्थित नियम प्राप्त होते है । भारतीय ज्ञान

[1] मनु.स्मृति(2.10)

परम्परा में शक्ति का स्वरूप केवल आध्यात्मिक , दार्शनिक (विमर्श या मंत्रो तक) सीमित नहीं है, अपितु नारी में समाविष्ट क्षमता, बौद्धिक तीक्षण्ता एवं उसके समाजिक-आर्थिक अधिकारों का भी एक जीवन्त प्रकटीकरण है । धर्मशास्त्रीय परंपरा में नारी की स्थिति को प्रायशः विमर्श का केंद्र माना गया है, वैदिक ऋचाओं में जहाँ नारी को शक्ति के रुप में प्रतिष्ठित किया गया है वही परवर्ती धर्मशास्त्रीय परंपरा व स्मृतियों में सतता उनकी सुरक्षा और संरक्षण के विषय में विचार -विमर्श होता रहा है जहाँ एक तरफ उनको पारिवारिक जीवन का आधार माना गया पूजनीय माना गया है मनुस्मृति में भी नारी को पूजनीय माना गया है -

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः । (मनु.स्मृति.3.56)[2]

वही दूसरी तरफ उनकी संरक्षण, अधिकारों के विषय में बताया गया है । अतः यहाँ एक प्रश्न यह भी उठता है कि समाज में स्त्रियों की सुरक्षा को ही सुनिश्चित करना क्यों महत्वपूर्ण माना गया है । अतः यह व्यवस्थाएँ वास्तविक सशक्तिकरण थे या फिर प्राचीनकालीन समाज की अवधारणाएं ही ऐसी थी । अपितु प्राचीन भारतीय समाज को मुख्यत: पितृसत्तात्मक माना जाता है । नारी संबंधित अधिकारों और स्वयतत्ता के विषय मे अन्य ग्रंथो की अपेक्षा याज्ञ.स्मृति में याज्ञ. के द्वारा विधिक प्रक्रियाओं (व्यवहारो) का सुदृढ़ीकरण एवं विधि का व्यवस्थित संयोजन करने का प्रयत्न किया गया है । याज्ञ. स्मृति को न्यायिक प्रक्रियाओं (व्यवहार) के सुदृढीकरण और विधि के सुव्यवस्थित तथा प्रमाणिक स्वरूप के विवेचन के लिए एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता हैं।याज्ञ ने अपनी संक्षिप्त एवं सुगठित व्यवहार पद्धति के माध्यम से विधिक सुधारो को सूत्रपात किया । नारी की स्वायत्ता को 'सुरक्षा' की इस अवधारणा ने प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक किस तरह से प्रभावित किया है,और वर्तमान में कैसे यह सशक्तिकरण की नई परिभाषाओं के रूप में अवतरित हो रही है। वस्तुतः शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य स्त्रियों के अधिकारों का विश्लेषण करना है। अतः यह जानना है कि किस प्रकार से याज्ञ. के द्वारा नारी के दाय संबंधित अधिकारों को सुदृढ़ किया गया, अतः पत्नी, पुत्री और विधवा स्त्रियों को दाय में अधिकार स्त्रीधन की मान्यता पुत्राभाव में पुत्री को उत्तराधिकार की स्वीकृति का विश्लेषण करते हुए उनकी सामाजिक तथा वैधानिक निहितार्थो के महत्व को आधुनिक दृष्टिकोण से समझने का प्रयास करना है ।

<u>दाय - भाग का स्वरूप</u>

याज्ञ. धर्मशास्त्रों में वर्णित 18 व्यवहारपदो में दायविभाग भी एक हैं, जिसका शाब्दिक अर्थ हैं - "संपत्ति का विभाजन "। इसमें उत्तराधिकारी और विभाजन दोनो से संबन्धित नियमों का वर्णन है । दायविभाग का वर्णन याज्ञ.स्मृति में अत्यंत व्यवस्थित रूप से हुआ है। जहाँ पैतृक संपत्ति के विभाजन एवं उत्तराधिकार सम्बंधित विषयो में विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। सामान्यतौर पर पुत्रों को उत्तराधिकारी माना जाता है किंतु याज्ञ के द्वारा पत्नी, पुत्री, विधवा आदि को भी विशेष परिस्थितियो में उत्तराधिकार दिये गये है। याज्ञ. स्मृति के परिप्रेक्ष्य में दाय-विभाग से संबंधित दो सम्प्रदाय हुए - प्रथम विज्ञानेश्वर कृत्त मिताक्षरा टीका एवं द्वितीय जिमूतवाहन कृत दायभाग ।

- परिभाषा - यद् धनं स्वामिसंबधादेव निमित्तदन्यस्य एवं भवति दाय उच्यते। विभागों नाम द्रव्य

---

[2] मनु.स्मृति(3.56)

समुदाय वषयाणामनेकस्वाम्यानां तदेकेकदेशुषु व्यवस्थापनम् । [3]

विज्ञानेश्वर के द्वारा मिताक्षारा टीका में दायविभाग प्रकरण में संपत्ति विभाजन का वर्णन किया है जिसमें उन्होने 'दाय और विभाग ' दोनो शब्दों की परिभाषा करी है। अर्थात् - स्वामी के संबंध निमित्त मात्र होने से ही जो धन किसी अन्य व्यक्ति का अधिकार बन जाए वह दाय है । विभाग - जब द्रव्यसमुदाय (संयुक्त संपत्ति) आदि विषय पर अनेक स्वामी का सामूहिक स्वामित्व हो तब संयुक्त स्वामित्व का समाप्तकर एक देश में प्रत्येक व्यक्ति के लिए संप्ति को विभाजित करना 'विभाग' कहलाता है । 'स्व' और 'स्वामी' संबंधित अवधारणा 'दाय' के विवेचन में निहित रहती है। स्व का अर्थ - जो किसी से संबंधित है अर्थात् संपत्ति । स्वामी का अर्थ - अधिकार [4] स्वामी की परिभाषा को याज्ञवल्कय ने नारी के विषय में व्यापक करने के प्रयास किए और नारी को केवल उत्तराधिकारणी के रूप में ही नहीं बल्कि स्वतंत्र विधिक व्यक्तित्व के रूप में उनके महत्व को समाज में स्थापित करने का प्रयास किया । संपत्ति संबंधित अधिकार प्राचीन समाज में न केवल आर्थिक स्वायत्ता से जुड़ा विषय था बल्कि समाजिक प्रविष्ठा और परिवार की एकता से भी संबंधित थी ।

पुत्री के अधिकार

स्मृतिकारो के द्वारा स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार देने का सचेष्ट प्रयास किया गया उनके द्वारा उत्तराधिकार संबंधित विषयो पर कुछ परिस्थितियों में पुत्रियों को भी स्वामित्व का अधिकार पुत्रो के समान ही देने का प्रावधान किया गया था। जैसे –

पत्नी दुहितरश्चैव पितरौ भ्रातरस्तथा।

तत्सुता गोत्रजा बन्धुशिष्यसब्रह्मचारिणः।।

(याज्ञवल्क्य स्मृति – २.१३५-१३६) परंतु प्रायशः परिदृश्य में उत्तराधिकार संबंधित प्रधानता पुरुषो को ही प्राप्त थी, स्त्रियों का स्वामित्व का अधिकार तो दिया किंतु वह पुरुषों के समान स्तरीयता का नहीं था। अतः याज्ञ. के द्वारा पुत्री को केवल आश्रित सदस्य या पराये धन के रूप में नही देखा बल्कि आर्थिक स्वयत्ता और समाज में उनकी प्रतिष्ठा को सुनिश्चित करने का भी महत्वपूर्ण प्रयत्न किया अतः पुत्र के अभाव में पुत्री को भी पिता के सम्पत्ति मे अधिकार प्रदान किया गया और अगर पिता के मृत्यु हो जाए तो भाई को अपने भाग का चतुर्थांश देकर बहनों का विवाह करने का भी विधान किया । दूसरी स्त्री से जब एक पुरूष विवाह करता था उसकी सम्पति में दूसरी स्त्री के पुत्री के अधिकारों का भी वर्णन याज्ञ.ने किया है। माता की मृत्यु के बाद उसके स्त्रीधन पर भी सर्वप्रथम अधिकार पुत्री को दिया जाता है और पुत्री न हो तो वह धन पुत्रो को दे दिया जाता है । [5] अतः स्मृतिकारों के द्वारा नारी को पारिवारिक और आर्थिक रूप से सुदृढ़ करने का प्रयत्न किया । किंतु इसका नकारात्मक परिणाम भी हुआ कि कन्या का सम्पत्ति पर स्वामित्व विमुक्त हो गया ।

---

[3] याज्ञवल्क्य स्मृति (दयाविभागप्रकरण), मिताक्षरा व्याख्यान, पृ 252

[4] आर्य, डॉक्टर भारती. (2007). स्मृतियों में नारी. विश्व भारती अनुसंधान परिषदः ज्ञानपुर, भदोही. द्वितीय संस्करण. पृष्ठ 104

[5] मातुर्दुद्दितरः शेषसृणास्ताभ्य ऋतेऽन्वयः।(याज्ञ.स्मृति.११७)

विधवा के अधिकार

स्त्री को हमेशा से दया और करुणा का पात्र समझा जाता रहा है। पितृसत्तातमक संरचना में विधवाओं को असहाय एवं जिम्मेदारी (बोझ) माना जाता है एवं उनको उनके अधिकारों से वंचित रखा जाता होगा और उन्हें पति के मृत्यु के बाद मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जाता रहा होगा, अतः समाज में या परिवार में उनके साथ कोई दुर्व्यवहार न करे एवं उसे अपने पति के मृत्यु के बाद अन्य किसी पर आर्थिक रूप से निर्भर न रहना पडे इसलिए याज्ञ. ने संपत्ति पर सर्वप्रथम अधिकार पत्नी का माना है , अतः स्त्री का किसी प्रकार का पुत्र न हों एवं उसके पति के मृत्यु हो जाएं तो उस से संबंधित संपत्ति पर सर्वप्रथम अधिकार उसकी पत्नी का ,फिर उसकी पुत्री का फिर पिता , माता, भाई, गोत्र आदि लोगों को अधिकारी माना जाता है। [6] बाद में विज्ञानेश्वर के द्वारा जो मिताक्षरा टीका लिखी गई उसमे विधवा के अधिकारो के संबंध में जो सुस्पष्ट व्याख्या प्राप्त होती है उसी ने हिंदू उत्तराधिकारी अधीनियम से संबंधित कानून की नींव रखी। कई स्मृतिकारो ने विधवाओं को पति के सम्पत्ति पर पूर्णतः स्वामित्व न देकर केवल भोगाधिकार के विषय में वर्णन किया है। बाद के व्याख्याकारों के द्वारा इसको जीवनपर्यंत निहितार्थ के स्वरूप में नियत करने का प्रयास किया है। अथवा विभिन्न कालखंडो में इस विषय में विभिन्न मत प्रचलित है। परंतु इसका मुख्य उद्देश्य नारी की स्वयत्तययता और समाज में उसकी प्रतिष्ठा को स्थापित करना था। किंतु नारी को स्वामित्व संबंधित उत्तराधिकार भी तभी प्राप्त होने थे जब उनका पुनर्विवाह इत्यादि नही होना था। तब उस परिस्थिति में उसे पति के सम्पत्ति में अधिकार मिलता था। प्रायः विधवा स्त्रियों के प्रति समाज की कुत्सित मानसिकता देखने को मिलती थी जहाँ उसे संपत्ति संबंधित अधिकार तो दिया गया किंतु उनकी स्वाधीनता उतना बड़ा उद्देश्य नही था, जितना परिवार की मर्यादा के भीतर उन्हे सुरक्षित रखना था।

माता के अधिकार

याज्ञ. के द्वारा भी दाय में माता को पुत्रों के सम्पत्ति संबंधित अधिकार प्राप्त है अतः अगर किसी स्त्री को उसके पति या श्वसुर आदि से स्त्रीधन न प्राप्त हुआ हो तो उस स्थिति में माता को भी दाय में पुत्रों के समान एक भाग दे दिया जाता है।[7] जिससे उसे आर्थिक रूप से अपने पुत्रों पर निर्भर न रहना पडे और कोई भी पुत्र अपनी माता के साथ किसी भी प्रकार का दुर्व्यवहार न कर सके एवं परिवार की संचालन प्रक्रिया में उनकी प्रभावी भूमिका बनी रहे।

अगर हम आज भी देखे तो यह कानूनी प्रावधान है कि पिता की मृत्यु के बाद माता को भी पुत्र के समान दाय का एक भाग मिले और माता अपनी इच्छा से वह भाग अपने किसी भी पुत्र या व्यक्ति को दे सकती है जो बुढ़ापे में उनकी देखभाल करे। आधुनिक काल में भी अगर हम देखे तो वृद्धाश्रम (Old Age Home) की संख्या बढ़ रही है जिसका कारण है शहरीकरण एवं एकल परिवारो की प्रणाली, अतः इस कारण से धीरे-धीरे लोग अपने माता-पिता की वृद्ध अवस्था में देखभाल नही करते एवं उनके भावनात्मक दबाव डालकर संपत्ति अपने नाम करवा लेते है।

---

[6] पत्नी दुहितरश्चैव पितरौ भ्रातरस्तथा ।तत्सुता गोत्रजा बन्धुशिष्यसब्रह्मचारिणः॥ (याज्ञ. स्मृति. श्लोक 135)

[7] पितृभ्यां यस्य यद्दत्तं तत्तस्यैव धनं भवेत्॥
पितुरुर्ध्वं विभजता माताप्यंशं समं हरेत्॥(याज्ञ. स्मृति.123)

पत्नी के लिए अधिकार

याज्ञ. स्मृति में दूसरे विवाह के संदर्भ में पहली - पत्नी के अधिकारों के बारे में स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है।

अधिविन्नस्त्रियै दंद्यादाधिवेदनिकं समम्। न दत्तं स्त्रीधनं यस्यै दत्ते त्वर्ध प्रकल्पयेत्।। (याज्ञ .स्मृति.148)

अर्थात् पुरुष दूसरा विवाह कर लेता है तो पहली स्त्री को 'आधिवेदनिक रूप में स्त्रीधन देने का प्रावधान था। अगर स्त्रीधन न दिया गया हो तब उसे दूसरी शादी में जितने धन खर्च हो उतना धन पहली स्त्री को देना चाहिए और अगर स्त्रीधन दिया हो तो शादी में जो धन लगा हो उसका आधा धन पहली पत्नी को दे। इसका स्पष्ट तात्पर्य यह है याज्ञ. ने बहुपत्नीत्व विवाह के संदर्भ में एवं प्रत्येक पत्नी के अधिकारों एवं पति के द्वारा प्रत्येक पत्नी के प्रति उसके कर्तव्यों का स्पष्ट उल्लेख किया। जिससे वह अपना अवशिष्ट जीवन स्वाभिमान के साथ बिना किसी दबाव के अपनी इच्छा से व्यतीत कर सके। नारी को सदैव से तप, त्याग, पतिव्रत धर्म, नम्रता, पति सेवा जैसे गुणो आदि के रुप में प्रतिष्ठित किया गया। एवं पुरुषों को तो बहुविवाह के अधिकार दिये गये जिसके कारण से समाज में अन्य पत्नी के अधिकार और उनकी समाजिक और मानसिक स्तर पर नाकारात्मक प्रभाव दृष्टिगत होता है। अधिक पत्नियों के होने के कारण उनके बच्चों के अधिकार, संपत्ति विवाद इत्यादि में विवाह की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। किंतु इस संदर्भ में याज्ञ. के द्वारा स्पष्ट प्रावधान दिये गये थे। अतः आधुनिक काल में भी इससे संबंधित स्पष्ट कानून का उल्लेख मिलता है। एवं अगर पहली पत्नी पति के दूसरे विवाह करने के पश्चात् तलाक लेना चाहे तो उसे Alimony रूप में धन देने का प्रावधान किया गया किंतु समाज में कुछ कुतसित मानसिकता के लोग गलत ठहरातें है यहाँ तक की

स्त्रीधन

स्त्रीधन का शाब्दिक अर्थ है - 'स्त्री की सम्पत्ति' वह सम्पत्ति जिस पर पूर्ण रूप से एक महिला का स्वामित्व हो उसे स्त्रीधन कहा जाता है। स्त्री से संबंधित अधिकार या उसकी निजी संपत्ति उसका ही आधिपत्य होता है उसे उसके सहमति के बिना अन्य कोई भी व्यक्ति उपयोग नही कर सकता। याज्ञ. ने स्त्रीधन की परिभाषा को इतना व्यापक बना दिया था कि उसमें हर प्रकार की सम्पत्ति समाहित हो गई एवं उस पर पूर्ण रूप से केवल एक महिला का ही स्वामित्व था किंतु परवर्ती काल में देखो तो स्त्रीधन का तात्पर्य मलीनता से ग्रस्त हो गया एवं समाज में उसे दहेज प्रथा से संबंधित किये जाने लगा। जिसके कारण समाज में स्त्रियों को केवल पराया धन समझा जाने लगा एवं उनकी स्वतंत्रता एवं समाज में उनकी स्थिति शोचनीय हो गयी। उन्हें उनके अधिकारों से वंचित रखा जाना प्रारंभ कर दिया गया। उनको ससुराल आदि पक्ष से दहेज आदि के लिए शारीरिक और मानसिक रूप से प्रताड़ित करना आरंभ हो गया। जिसका परिणाम यह हुआ स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार होने लगा - या तो उन्हें जहर दे दिया जाता था, जला दिया जाता था , या फिर फांसी लगा दी जाती थी या फिर उसे इतना मानसिक रूप से प्रताड़ित कर दिया जाता था कि वे स्वयं ही आत्महत्या करने के लिए विवश हो जाती थी। अगर हम स्मृति ग्रंथों में भी देखे तो स्त्रीधन एक पिता अपनी पुत्री को विवाह के समय जो धन उपहार या अचल संपत्ति उस पर पूर्ण रूप से केवल उसकी पुत्री का ही स्वामित्व होता था। एवं यहाँ तक की इस पर उसके पति का भी स्वामित्व नहीं होता जब तक की कोई विपदा न आए मध्यकालीन समाज तक आते-आते समाज में पुरुष का वर्चस्व हो गया और लालच, समाजिक प्रतिष्ठा एवं अशिक्षा के कारण स्त्रीधन को दहेज से जोड़ना प्रारंभ कर दिया जिसके कारण यह प्रथा महिलाओं के लिए अभिशाप बन गई। अतः यह व्यवस्था समाज में महिलाओं के दृष्टिगत सुरक्षा की भावना और वैवाहिक

जीवन में उनकी भूमिका की मान्यता को दर्शाता है। प्राग्वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति अत्यधिक प्रगतिशील थी उस समय नारी जीवन अपने सर्वोत्कृष्ट स्थान पर था - शिक्षा से लेकर, गुण, कर्तव्य, अधिकार और समाज में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका , आधिपत्य सब कुछ उत्कृष्ट था। इस बात से भी ज्ञात होता है कि कानूनी रूप से औपचारीकरण से पूर्व भी महिला के निजी धन के विषय में आर्थिक स्वयत्तता भी एक महत्वपूर्ण समाजिक तथ्य थी। स्त्रीधन शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अग्निवेश्य गृह्यसूत्र में कन्यादान के संदर्भ में प्राप्त होता हैं।

वधूमताद्भिरद्दंत प्रतिगुह्याण्ति स्त्रीधनं त। 1.6.1।

भारतीय समाज मुख्यतः पुरूष प्रधान रहा है अतः स्त्रियों का स्वतंत्रता एवं स्वतयत्तता अधिकार इत्यादि विषय जहाँ चिंतन का विषय रहे है, वही पुरूषों को हमेशा से एक स्त्री से अधिक अधिकार दिये गये है, धर्मशासत्रीय ग्रंथो के अंतर्गत संपत्ति उत्तराधिकारी इत्यादि विषयों में स्त्रियों को अधिकार तो दिये गये, एवं उस समय

पितृमातृपति भ्रातृदत्तमध्यग्न्युपाणतम।

आधिवेदनिकाद्यं च स्त्रीधनं तत्प्रकीर्त्तितम्।। (याज्ञ.स्मृति.143)

की समाजिक संरचना के अनुरूप महिलाओं के अधिकारों और आर्थिक स्वयत्ता के विषय में उदार दृष्टिकोण देखने को मिलता है किन्तु यह वास्तविक स्वामित्व की अपेक्षा प्रतीकात्मक स्वामित्व तक सीमित था एवं धीरे -धीरे स्मृतिकारों ने भी महिलाओ के अधिकारो को संकुचित करना प्रारंभ कर दिया किन्तु इस दृष्टि में याज्ञ का अन्य स्मृतिकारो की अपेक्षा व्यापक दृष्टिकोण देखने को प्राप्त होता है। दायभाग के संदर्भ में स्त्रीधन एक बहुत महत्वपूर्ण विषय है अतः मनु के द्वारा स्त्रीधन के 6 प्रकारो का वर्णन किया गया है।

अध्यग्न्यध्यावाहनिकं दत्तं च प्रीतिकर्मणि।

भ्रातृमातृपितृप्राप्तं षड्विधं स्त्रीधनं स्मृतम्॥ (मनुस्मृति 9.194)

एवं याज्ञ के द्वारा भी स्त्रीधन अर्थात् स्त्री की संपत्ति के विषय में भी व्यापक विचार प्रस्तुत किये गये उन्होने भी स्त्रीधन के 6 प्रकारो के बारे में वर्णन किया है,जो धन पिता माता भाई और पति ने दिया हो विवाह के समय अग्नि के समक्ष जो कुछ भी धन या उपहार प्राप्त हुआ हो और आधिवेदनिक (जो धन दूसरा ब्याह करने के समय पहले स्त्री को पति द्वारा दिया जाता है) इत्यादि स्त्रीधन के अंतर्गत आता है।[8] इससे ज्ञात होता है कि उस समय 'स्त्रीधन' नारी की आर्थिक स्वयत्ता और स्वतंत्रता का प्रमुख आधार था। एवं इस विषय से संबंधित उनका सबसे महत्वपूर्ण योगदान था कि स्त्रीधन के वर्णन करते समय अंत में 'आद्या' (जिसका शाब्दिक अर्थ है 'और', 'इत्यादि' या इसी प्रकार) को सम्मिलित करना (आधिवेदनिकाद्यं) भारतीय न्यायव्यवस्था में महिलाओं के अधिकारो के विषय में उन्हें एक आधार प्रदान किया। जिसका मुख्य उद्देश्य

---

[8] (याज्ञ.स्मृति.143)

महिलाओ को संपत्ति में पुरुषों के समान अधिकार देना था। मिताक्षरा टीका में स्त्रीधन को केवल 6 प्रकारो तक सीमित न रखकर याज्ञ. के द्वारा प्रयुक्त "आद्य" शब्द को परिभाषित करते हुए उसमे इस शब्द को इसके शाब्दिक अर्थ के अनुसार समझने का प्रयास करना चाहिए न कि किसी तकनीकि अर्थ के अनुसार अर्थात् जिसमे एक स्त्री के द्वारा विभिन्न माध्यमों से अर्जित की गई समपत्ति जैसे उत्तराधिकार, विभाजन, खरीद, संपत्ति की जब्ती अन्य स्त्रोत आदि से सभी प्रकार की संपत्ति सम्मिलित है। अर्थात् महिलाओं के अधिकारों के विषय में इनके द्वारा स्त्रीधन के विषय में अत्याधिक व्यापक व्याख्या दी गई , जिससे ज्ञात होता है कि उन्होने स्त्री के अधिकारो और स्वतंत्रता के विषय में पितृसत्तात्मक व्यवस्था के अंतर्गत भी उन्हें उनके अधिकारो के विषय में बोध करवाया।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उपादेयता

नारी के दाय संबंधित अधिकारों के विषय में अध्ययन इसलिए भी महत्वपूर्ण रहा है क्योकि प्राचीन भारतीय न्यायशास्त्र को समाजिक विकास में हमेशा से अवरोधक तत्व माना जाता रहा है बल्कि वह हमेशा से ही परिवर्तनशील रहा है अतः उस काल की समाजिक संरचना के अनुरूप जहाँ पुरूष को प्रमुखता दी जाती थी फिर भी स्त्रियों के अधिकारों के विषय में याज्ञ. के द्वारा सीमित ही किंतु उनके स्वतंत्रता एवं अधिकारो , स्वामित्व आदि विषयो के बारे में प्रचुर दूरदर्शी दृष्टिकोण निरूपित किया गया है। अगर यदि हम अवलोकन करे तो समाज में स्त्री की सुरक्षा को ही सुनिश्चित करना हमेशा से महत्वपूर्ण क्यो माना जाता रहा है ? इस प्रश्न का उत्तर प्राचीनकालिन समाज की संरचना के अंतर्निहित हैं। महिलाओं को पितृसत्तात्मक के भीतर हमेशा से सभी में संदर्भो मे निष्क्रीय, शक्तिहीन एवं पीड़ित समझा जाता रहा है। धीरे-धीरे समाज में उनकी स्थिति दयनीय होती चली गयी और उन्हे उनके स्वयं के अधिकारो के बारे में बोध नही था उन्हे केवल परिवारिक व्यवस्था तक सीमित कर दिया गया। स्मृति ग्रंथो के मूल श्लोको से अत्यधिक प्रभाव तो जो उन पर टिकाएँ लिखी गई उसका समाज पर पड़ा जिनमे महिलाओं के अधिकार की बात तो की गयी,किन्तु उसमे भी पुरूष को सर्वाधिक प्राथमिकता दी गई एवं मध्यकाल तक आते-आते इसका रूप सुरक्षा से नियंत्रता में बदल गया अतः अगर हम इस संपत्ति के अधिकार के विषय में देखे तो उनपर भावनात्मक दबाव डाल कर उन्हे जायदाद- विरासत को छोड़ने के लिए कहते थे और उन्हे "हक़ त्याग" पर हस्ताक्षर भी करा लिया जाता था कि जिससे वह कानूनी रूप से उस पर कोई मुकदमा न कर सके, मुख्यतः Haq Tyag का कानून महिलाओं के पक्ष में बनाया गया था किंतु अभी भी कुछ परिस्थितियों में देखा जाता है कि अक्सर परिवारिक शांति बनाए और समाजिक स्थितियों के कारण एक स्त्री स्वैक्छिक रूप से अपने संपत्ति से संबंधित अधिकार का त्याग कर देती है। अतः उपलब्ध प्रमाणो पर विचार करने पर यह स्पष्ट होता है , याज्ञ. आदि स्मृतिकारो के द्वारा जो प्रारंभ में नींव रखी गई पितृसत्तात्मक के भीतर भी उन्हे जो अधिकार दिये गये वह तात्कालीन समाज के व्यापक सिद्धांतो को परिलक्षित करते है किंतु पितृसत्तात्मक समाज के द्वारा अपने वर्चस्व को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए महिलाओं के अधिकारों को केवल नाममात्र तक सीमित कर दिया एवं वास्तविक जीवन में लागू होने की जगह केवल सैद्धांतिक नियम बनकर रह गये। कालांतर में अब देखे तो महिलाओं के अपने अधिकारों के प्रति बढ़ती जागरूकता केवल एक सामाजिक बदलाव नही, बल्कि एक वैचारिक क्रांति है , और स्त्रियों की सुरक्षा न केवल उनके लिए बल्कि समृद्ध , न्यायपूर्ण और सशक्त समाज के निर्माण के लिए भी अपरिहार्य है। यदि स्त्रियाँ अपने वैधानिक और प्रकृतिदत्त अधिकार के प्रति अभिज्ञ हो जाए तो परंपरागत शक्ति संतुलन का स्थानांतरण और पुनर्निर्माण अपरिहार्य हो जाएगा। हिंदू विधि के 2 प्रमुख सम्प्रदाय माने जाते है - मिताक्षरा एवं दायभाग जिसमे उत्तराधिकार से संबंधित

नियमों में नारी की स्थिति का विधिक कानूनी आधार पर वर्णित किया। मिताक्षरा सम्प्रदाय ने केवल सीमित उत्तराधिकार तथा आजीवन संपत्ति तक परिबद्ध कर उन्हें सहदायिक अधिकार से विमुख कर दिया। इस विषय मे दायभाग सम्प्रदाय ने पुरूष उत्तराधिकारी के अभाव में स्त्रियों को उत्तराधिकार प्राप्त करने की स्विकृति दी।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः परिवार एक ऐसी समेकित इकाई है जहाँ स्त्री की भूमिका केवल मात्र आलंकरिक न लेकर उसके पुरुषार्थ और भागीदारी से भी संबंधित होनी चाहिए। दायभाग दाय संबंधित अधिकार केवल संपत्ति का ही प्रश्न नहीं है अपितु शक्ति संतुलन का भी प्रश्न है। उसमें भी नारी की स्थिति को जानना , की किस प्रकार से संरक्षित सशक्तिकरण के अभ्यंतर भी याज्ञ. के द्वारा उन्हे अधिकार दिये गये जिससे उनकी समाज में सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके एवं उसकी प्रतिष्ठा को संरक्षित कर उसकी अंतर्निहित शक्ति को समाज में सुस्फुटित करने का प्रयास किया है। इस विषय में याज्ञ का स्त्रियो के प्रति अन्य स्मृतिकारो की अपेक्षा अधिक उदार दृष्टिकोण देखने को मिलता है। भारत मे नारी के सम्पति संबंधित अधिकार के विषय मे विकास देखे तो वह एक जैसा नही रहा है और न ही अत्यधिक छिप्र बल्कि यह एक क्रमिकप्रक्रिया रही है जो विभिन्न सिद्धांतो से प्रभावित हुई है जैसे याज्ञ. स्मृति में जो सिद्धांत वर्णित है,वे मध्यकाल तक आते-आते कानूनो में पुरूष वर्चस्व अत्यधिक देखने को मिली , इसके पश्चात मिताक्षर और दायभाग जैसे सम्प्रदायो के माध्यम से अधिकारो का विस्तार तो हुआ किंतु उसमें भी कुछ व्यवहारिक बाधाएं दृष्टिगत हुई जैसे सहादायिक अधिकार इत्यादि से वंचित करना इत्यादि।

याज्ञ. स्मृति में न्यायिक प्रक्रियाओं का सुदृढ़ीकरण और विधि का व्यवस्थित वर्णन नारी संबंधित अधिकारों के विषय में प्राप्त होता है ,उनके द्वारा जो नियम बनाये गये है वह आज के समय में भी अत्यंत प्रासंगिक है एवं आधुनिक न्याय व्यवस्था में उत्तराधिकारी की संबंधित विधिक नियम की नींव इस ग्रंथ के आधार पर है। एवं इस तथ्य से यह सत्यापित होता है कि प्राचीन भारतीय विधि व्यवस्था नारी की प्रतिष्ठा एवं सुरक्षा के प्रति एक संतुलित एवं विविध दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती है। अंततः स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान ने समानता और भेदभाव जैसे सिद्धांतो पर चिंतन किया एवं समाजिक न्याय और लैंगिक समानता जैसे सिद्धांतो की स्थापना करी जिसमे पुत्री को भी पुत्र के समान दाय में स्वामित्व दिया गया।अतः 2005 के हिंदू उत्तराधिकार (संशोधन) के अधिनियम ने बेटियो को भी जन्म से पुत्रो के समान अधिकार दिये।

संदर्भ सूची

• याज्ञवल्क्यस्मृति। भाषाटीका सहित। सम्पा. पं. गिरिजाप्रसाद द्विवेदी। लखनऊ: नवलकिशोर प्रेस, सन् 1930।

• धर्मशास्त्रकाइतिहास (भाग१-५) , पी.वी.काणे, हिन्दी समिति उतरप्रदेश, लखनऊ, १९७३-८०।

• याज्ञवल्क्यस्मृति, याज्ञवल्क्य, (मिताक्षरा व्याख्या सहित) . कमलनयन शर्मा, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय,जयपुर, प्रथम संस्करण २००९।

• मनुस्मृति, मनु, उर्मिला रुस्तगी, जे.पी.पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, २००६।

• याज्ञवल्क्यस्मृति।पं० थानेशचन्द्र उप्रैती।मिताक्षरा संस्कृतव्याख्यानुसार 'सुधा' व्याख्या सहित हिन्दी अनुवाद।दिल्ली: परिमल पब्लिकेशन्स।

• संगीता राय।धर्मशास्त्र में वर्णित स्त्री-सम्पत्ति के विभिन्न प्रकार। शोधशौर्यम् (अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका),नवम्बर–दिसम्बर 2018, पृ. 135–143।

• Vanshika & Rao, A. S. (2021). Power, Opportunity and Status of Women in the Golden Vedic Era. Ilkogretim Online – Elementary Education Online, 20(6), 4046–4055.

• स्मिता यादव। याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार दायविभाग के नियम एवं उनकी प्रासंगिकता। शोधशौर्यम् (अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका),जनवरी–फरवरी 2019, पृ. 117–125।

• डॉ. समणी संगीतप्रज्ञ एवं बिन्दु चन्द्राणी, । स्मृतिकालीन और वर्तमानकालीन नारी एवं मौलिक अधिकार। International Journal of Novel Research and Development (IJNRD),अगस्त 2023, पृ. B993–b997।

• Mandlik, Vishwanath Narayan. Vyavahara Mayukha or Hindu Law. Asian Publication Services, 1880.

• अंजली गुप्ता। याज्ञवल्क्य स्मृति में दायविधान : एक ऐतिहासिक अध्ययन। शोध मंथन-2022